अनुवाद : सतत् विकासमान वैश्विक ज्ञान को परस्पर जोड़ने वाला सेतु

Translation: A Bridge to Connect Continuously Growing Global Knowledge

रामशरण दास

Ram Sharan Das

IV/49, Vaishali, Ghaziabad-201010

rsgupta.248@yahoo.co.in

किसी भी समाज के द्रुत विकास में ज्ञान के सृजन की बड़ी अहम् भूमिका होती है। इसी बात का उपयोग करके जापान, चीन और कोरिया जैसे देश प्रगति पथ पर तेजी से आगे बढ़ रहे हैं। मानव समाजों के बीच अन्योन्यक्रियाओं के बढ़ने के कारण ज्ञान के भंडार में चरघातांकीय दर से वृद्धि हो रही है। किसी समाज में ज्ञान–विज्ञान का प्रचार–प्रसार जितनी तेजी से होता है, उसके विकास की गति भी उतनी ही तेज़ हो जाती है।

ज्ञान के प्रसार का माध्यम भाषा है। सभ्यता के विकास–क्रम में अनेक भाषाएं विकसित हुई हैं। ये भाषाएँ मानव समाज की विरासत हैं। इन समाजों के मध्य परस्पर संवाद में अनुवाद की भूमिका होती है। ज्ञान का भंडार इतना विशाल हो गया है कि उसका वर्गीकरण किए बिना उसे संभालना मुश्किल है। वर्गीकरण ने ज्ञान–भंडार को खण्डों में विभाजित कर दिया है। प्रत्येक खण्ड भी अपने आप में इतना विशाल है, और उसका ज्ञान–भंडार भी इतनी तेजी से विकसित हो रहा है कि किसी भी व्यक्ति के लिए अपने जीवन काल में ज्ञान के उस विशेष खण्ड में निष्णात होकर अपने को अद्यतन बनाए रखना कठिन हो रहा है। इसलिए विभिन्न विषय और उनके विशेषज्ञ विकसित हो रहे हैं। इसलिए अनुवाद की पहली समस्या एक ऐसा विषय–विशेषज्ञ प्रशिक्षित होना है जिसे कम से कम दो भाषाओं का सम्यक् ज्ञान हो।

भारत में तमाम कारणों के चलते पैदा हुए भाषायी द्वन्द्व ने ज्ञान के विकास और आग्रहण के प्रक्रमों को जटिल बना दिया है। त्रिभाषा सूत्र का भी पूरी ईमानदारी से अनुपालन न होने के कारण हिन्दी न तो प्रभावी रूप से संपर्क भाषा बन पाई, न भारतीय भाषाओं में उपलब्ध ज्ञान भंडार ही अपेक्षित परिमाण में बढ़ पाया। इससे वह स्वयं विकसित होकर दुनिया में अपने पद चिह्न अंकित न कर पाई। उल्टे अपनी पारस्परिक प्रतिस्पर्धा में हमने अंग्रेजी और केवल अंग्रेजी को वर्चस्व प्रदान कर दिया। राजनीति का शिकार न होते तो हम प्रथम भाषा के रूप में मातृभाषा, द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी भाषियों के लिए अन्य भारतीय भाषा, तथा अहिन्दी भाषियों के लिए हिन्दी को रखते और निम्न प्राथमिक कक्षाओं में अंग्रेजी या अन्य किसी विदेशी भाषा को प्रश्रय न देते। तृतीय भाषा का प्रावधान उच्च प्राथमिक कक्षाओं से होता जिसमें कोई भी क्लासिकल अथवा विदेशी भाषा शामिल होती। माध्यमिक कक्षा में मातृभाषा/हिन्दी/तृतीय भाषा में से किन्हीं दो को चुनने की सुविधा रहती। इस प्रकार आगे चलकर दो भाषाएं जानने वाले विशेषज्ञों की संभावना बनती। आशा है, नई शिक्षा नीति से इस दिशा में कुछ राह खुलेगी।

अनुवाद की दूसरी बड़ी चुनौती विषय के अनुसार अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मान्य शब्दावली के संगत अपनी भाषा में शब्दावली के विकास की है। इस हेतु 1960 के दशक में कार्य शुरु हुआ, और हिन्दी में तकनीकी शब्दावली निर्माण के लिए शब्दावली आयोग का गठन किया गया। अपेक्षा यह थी कि आयोग विश्व में विभिन्न

विषयों में जो नए शब्द ज्ञान सृजन का भाग बन रहे हैं, उनके संगत शब्द हिन्दी में लाएगा और आयोग के द्वारा सृजित शब्दों का उपयोग बोलचाल, विमर्श और ज्ञान संचार का भाग बनेगा। पर ऐसा हो नहीं पाया। इसके निम्नलिखित कारण रहेः

- तकनीकी शब्दावली आयोग संभवतः उतने प्रभावी ढंग से कार्य नहीं कर पाया जितनी इससे अपेक्षा थी।
- हिन्दी के विशेषज्ञों ने शुद्धतावादी नीति अपनाई और पहले से प्रचलित शब्दों को भी भाषा के अनुरूप ढालने के बजाए नए कठिन अव्यावहारिक शब्द गढ़ने की चेष्टा की, जैसे कि रेलगाड़ी के लिए लौहपथगामिनी, अथवा बंदरगाह के लिए पोतस्थितिस्थल आदि। ये शब्द चल नहीं पाए।
- अभिव्यक्ति की सरलता के नाम पर आयोग द्व ारा सुझाए गए सरल, सार्थक शब्दों को भी प्रचलन में लाने से बचा गया। हम भूल गए शब्द जब प्रचलन में नहीं आएंगे तो मृत हो जाएंगे। आखिर विषय के संप्रेषण का माध्यम शब्द ही तो हैं। शब्दों की कमी से भाषा की संप्रेषण क्षमता कम हो जाएगी, तो वह संकल्पना निर्माण कैसे कर पाएगी।
- संस्कृत की बेटी होने के कारण हिन्दी की शब्द सृजन–क्षमता अपरिमित है। हमने संकल्पनाओं के अनुरूप नव–शब्द सृजन का प्रक्रम विकसित ही नहीं किया, जो हम आसानी से कर सकते थे। हिन्दी में अंग्रेजी शब्दों के संगत शब्द ढूँढ़ने हों तो शब्दावली आयोग की शब्दावली के अतिरिक्त यदि कोई लोकप्रिय शब्दकोष है तो वह फादर कामिल बुल्के का शब्दकोष है। हिन्दी शब्द सृजन समान्तर कोश (Thesaurus) कोई है तो उसका ज्ञान लेखक को नहीं है। इस दिशा में विभिन्न विषयों के हिन्दी–अंग्रेजी ज्ञान संपन्न विशेषज्ञों को पहल करनी चाहिए।
- भाषा की संप्रेषण क्षमता में वृद्धि के लिए, बल्कि उसे अद्यतन बनाए रखने के लिए आवश्यक है कि जो शब्द हमारे पास हैं, उन्हें संजोएँ, प्रचलन में लाएँ। जो हमारे पास नहीं हैं, देखें कि क्या उनके संगत सरल, व्यवहार्य शब्द आसानी से गढ़े जा सकते है, और सबसे महत्वपूर्ण बात यह कि नई संकल्पनाओं से जुड़ी शब्दावली को अपनी भाषा में अनुकूलित कर जोड़ें। ध्यान यही रहे कि जो भी शब्द हम तय करें, वह संकल्पना का सटीक संप्रेषण करता हो। मसलन ब्लैक होल के लिए शब्दानुवाद श्यामविवर या बिग–बैंग के लिए महाविस्फोट शब्द इन संकल्पनाओं को ठीक से व्यक्त नहीं करते हैं। इसलिए इनको यथावत् भाषा में ग्रहण कर लेना ही अधिक समीचीन होगा।
- नए शब्द गढ़े जाएँ तो उन्हें शीघ्र–से–शीघ्र प्रचलन में लाना चाहिए। इसके लिए एक प्रक्रम विकसित किया जाए जिसमें व्यक्ति अपने द्व ारा गढ़े गए शब्दों को एक विशेषज्ञ समिति को भेज सके, जो संस्तुत करके उन्हें शब्दकोशों में स्थान दिला सके। मसलन लेखक ने सन् 2000 के लगभग सुझाव दिया था कि habitat के लिए शब्दावली आयोग के सुझाए गए शब्द आवास के स्थान पर 'पर्यावास' शब्द का उपयोग करना चाहिए, तथा surrogate mother को हम 'कोखदायी माँ' कह सकते हैं, किन्तु संकल्पनाओं के निकट होने के बावजूद अभी तक भी ये शब्द प्रचलन में नहीं आ पाए हैं।
- ज्ञान में जिस तेज़ी से वृद्धि हो रही है, कोई भाषा कितनी भी सामर्थ्यवान क्यों न हो, उतनी तेज़ी से शब्द निर्माण नहीं कर सकती। अतः नई संकल्पनाओं के संगत शब्दों को हमें यथावत अपनाने में संकोच नहीं करना चाहिए। हाँ, जहाँ लगे कि शब्द को भाषा के अनुरूप ढालना आवश्यक है वहां ऐसा किया जाना चाहिए और यदि कोई ऐसा करता है तो विशेषज्ञों को उसे शीघ्रता से मान्य करना चाहिए। लेखक

monitoring के लिए मोनीटरन, modulation के लिए मोडूलन, coding के लिए कोडन, focussing के लिए फोकसन आदि शब्दों के उपयोग की वकालत करता रहा है, किन्तु हिंदी ने इनके उपयोग को प्रोत्साहित किया है, ऐसा आभास उसे प्रायः नहीं हुआ।

अंत में मैं यही कहना चाहूँगा कि अंग्रेजी भाषा यदि अपनी तमाम कमजोरियों के बावजूद आज विश्व की सर्वाधिक सम्प्रेषणशील और उपयोग में आने वाली भाषा बन गई है तो उसका कारण यह है कि वह अन्य भाषाओँ के नए शब्द अपनाने में संकोच नहीं करती। जबकि हमारे भाषा विशेषज्ञ तो उलटे अपनी भाषा के प्रचलित शब्दों को भी अनुपयोगी (redundant) कह कर नकारने पर तुले रहते हैं। लेखक को 'हेतु' शब्द को व्यर्थ कह कर हटा देने के कारण कई लेखकों/अनुवादकों से बहस करनी पड़ी। हिन्दी का एक विनम्र सेवक होने के कारण मैंने अपने ये विचार केवल हिन्दी के संदर्भ में लिखे हैं। अन्य भारतीय भाषाओं में क्या चल रहा है इसका कोई विशेष ज्ञान मुझे नहीं है। लेकिन वे समस्त भाषाएं भी हमारी अपनी हैं, हमारे समाज की धरोधर हैं। विश्व पटल पर उन सबकी भी प्रतिष्ठा हो, यही कामना है।

संस्कृत श्लोक में पाई (π) का मान

प्राचीन भारत में संस्कृत में ऐसी श्लोक रचना भी होती थी कि पदच्छेद से दो सार्थक भाव निकलते हैं, और गणित के जटिल समाधान भी। इसका प्रयोग कूटकोड की भांति भी सम्भव है। एक उदाहरण इस प्रकार है -

कादि नव	:	क	ख	ग	घ	ङ	च	छ	ज	झ
		1	2	3	4	5	6	7	8	9
टादि नव	:	ट	ठ	ड	ढ	ण	त	थ	द	ध
		1	2	3	4	5	6	7	8	9
पादि पञ्चका	:	प	फ	ब	भ	म				
		1	2	3	4	5				
यादि अष्टक	:	य	र	ल	व	श	ष	स	ह	
		1	2	3	4	5	6	7	8	
क्ष	:	0								

इस कूट पद्धति का प्रयोग करके अनेक बहुअर्थी श्लोक लिखे जाते थे। निम्नलिखित श्लोक इसका एक श्रेष्ठ उदाहरण है :

गोपीभाग्य मधुव्रातः श्रृंगशोद्धि संधिगः ।
खलजीवितखाताव गलहाला रसंधरः ।।

स्रोत - Vedic Mathematics : Jagadguru Swami Sri Bharati Krishna Tirth ji Maharaj, Motilal Banarasidass Publishers Private Limited, Delhi, p.348, 2008.

यह श्लोक न केवल भिन्न अन्वयों के माध्यम से भगवान शिव की स्तुति है, भगवान कृष्ण की भी स्तुति है। उपर्युक्त कूट का उपयोग करें तो यह 32 दशमलव स्थानों तक पाई का मान बताता है।

3.14159265358979323846264338327 92 .....

इस श्लोक से दो बातें स्पष्ट होती हैं : एक यह कि प्राचीन भारत में पाई (π) के महत्त्व और मान का ज्ञान था, और दूसरी यह कि संस्कृत जैसी संप्रेषण-क्षमता विश्व की किसी भाषा में नहीं है।